खरतरगच्छ और तपागच्छ में प्रतिक्रमण सूत्र की परम्परा

श्री मानमल कुदाल

खरतरगच्छ के प्रभावशाली आचार्य श्री जिनप्रभसूरि जी (१४वीं शती ई.) की एक प्रमुख कृति है- विधिमार्गप्रपा। यह मूर्तिपूजक श्वेताम्बर परम्परा की क्रियाविधि का मानक ग्रन्थ है। इसमें सामायिक, प्रतिक्रमण, तपविधि, प्रव्रज्याविधि, योगविधि आदि का विवेचन है। लेखक ने यह सम्पूर्ण लेख पायधुनी, मुम्बई से सद्यः प्रकाशित विधिमार्गप्रपा से संकलित किया है। इस लेख के पाद टिप्पण (संदर्भ) में वर्तमान में प्रचलित खरतरगच्छ एवं तपागच्छ परम्परा के प्रतिक्रमण विषय भेद का भी उल्लेख किया गया है। लेख ज्ञानवर्धन की दृष्टि महत्त्वपूर्ण है। *-सम्पादक*

जैन साहित्य की परम्परा को अविच्छिन्न बनाने में अनेक साहित्यकारों और उनके ग्रन्थों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। जैन साहित्य की इस परम्परा में 'विधिमार्गप्रपा' का अद्वितीय स्थान है। 'विधिमार्गप्रपा' नामक ग्रन्थ के प्रणेता खरतरगच्छीय जिनप्रभसूरि हैं। उनकी यह रचना जैन महाराष्ट्री प्राकृत में है। इस कृति का रचनाकाल विक्रम सं. १३६३ है। इसकी रचना कोसल (अयोध्या) में हुई थी। यह ग्रन्थ ३५७५ श्लोक परिमाण है। इसकी रचना प्रायः गद्य में है। 'विधिमार्ग' यह खरतरगच्छ का ही पूर्व नाम है। यह ग्रन्थ विधि-विधानों की अमूल्य निधि है। नित्य (प्रतिदिन करने योग्य) और नैमित्तिक (विशेष अवसर या कभी-कभी करने योग्य) सभी प्रकार के विधि-विधान इसमें समाविष्ट है। इतना ही नहीं आचार्य जिनप्रभसूरि ने इसमें जैन धर्म के विधि-विधानों का प्रामाणिक उल्लेख किया है। अद्यावधि जैन धर्म में विधि-विधानों से संबंधित ऐसे प्रामाणिक ग्रन्थ विरले ही देखने को मिलते हैं।

इस ग्रन्थ के दशवें द्वार में 'प्रतिक्रमण समाचारी' का वर्णन किया गया है, जिसमें दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक और सांवत्सरिक इन पाँच प्रकार के प्रतिक्रमणों की यथाक्रम विधि निर्दिष्ट है। इन विधियों के अन्तर्गत बिल्ली दोषनिवारण की विधि, छींक दोष निवारण विधि और प्रतिक्रमण के समय बैठने योग्य वत्साकार मंडली की स्थापना विधि का भी निर्देश है।

'विधिमार्गप्रपा' में वर्णित विभिन्न प्रतिक्रमण विधियों का हम यहाँ उल्लेख करेंगे।

१. देवसियपडिक्कमणविही

पुव्वोल्लिंगिया पडिकमणसामायारी पुण एसा। सावओ गुरूहिं समं इक्को वा 'जावंति चेइयाइं' ति गाहादुगथुत्तिपणिहाणवज्जं चेययाइं वंदित्तु, चउराइखमासमणेहिं आयरियाई वंदिय, भूनिहिय सिरो 'सव्वस्सवि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवसिय' इच्चाइदंडगेण सयलाइयारमिच्छामिदुक्कडं दाउं, उट्ठिय सामाइयसुत्तं भणित्तु, 'इच्छामि ठाइउं काउसग्ग' मिच्चाइसुत्तं भणिय, पलंबियभुयकुप्परधरिय नाभि अहो जाणुड्ढं चउरंगुलठवियकडियपट्टो संजइकविट्ठाइदोसरहियं काउस्सग्गं काउं, जहक्कमं दिणकए अइयारे हियए धरिय, नमोक्कारेण पारिय, चवीसत्थयं पढिय, संडासगे पमज्जिय, उवविसिय, अलग्गवियबाहुजुओ मुहणंतए पंचवीसं पडिलेहणाओ काउं, काए वि तत्तियाओ चेव कुणइ। साविया पुण पट्ठिसिर-हिययवज्जं पन्नरस कुणइ। उट्ठिय बत्तीसदोसरहियं पणवीसावस्सयसुद्धं किइकम्मं काउं अवणयंगो करजुयविहिधरियपुत्ती देवसियाइयाराणं गुरुपुरओ वियऽणत्थं आलोयणदंडगं पढइ। तओ पुत्तीए कट्ठासणं पाउंछणं वा पडिलेहिय वामं जाणुं हिट्ठा दाहिणं च उड्ढं काउं, करजुयगहियपुत्ती सम्मं पडिकमणसुत्तं भणइ। तओ दव्वभावुट्ठिओ 'अब्भुट्ठिओमि' इच्चाइदंडगं पढित्ता, वंदणं दाउं, पणगाइसु जइसु तिन्नि खामित्ता, सामन्नसाहूसु पुण ठवणायरिएण समं खामणं काउं, तओ तिन्नि साहू खामित्ता, पुणो किइकम्मं काउं, उद्धट्ठिओ सिरकयंजली 'आयरियउवज्झाए' इच्चाइगाहातिगं पढित्ता सामाइयसुत्तं उस्सगदंडयं च भणिय, काउस्सग्गे चारित्ताइयारसुद्धिनिमित्तं, उज्जोयदुगं चिंतेइ। तओ गुरुणा पारिए पारित्ता, सम्मत्तसुद्धिहेउं उज्जोयं पढिय, सव्वलोयअरिहंतचेइयाराहणुस्सग्गं काउं, उज्जोयं चिंतिय सुयसोहिनिमित्तं 'पुक्खरवरदीवड्ढं' कड्ढिय, पुणो पणवीसुस्सासं काउस्सग्गं काउं पारिय, सिद्धित्थवं पढित्ता, सुयदेवयाए काउस्सग्गे नमुक्कारं चिंतिय, तीसे थुइं देइ सुणेइ वा। एवं खित्तदेवयाए वि काउस्सग्गे नमुक्कारं चिंतिऊण, पारिय, तत्थुइं दाउं सोउं वा पंचमंगलं पढिय संडासए पमज्जिय, उवविसिय, पुव्वं व पुत्तिं पेहिय, वंदणं दाउं 'इच्छामो अणुसिट्ठिं' ति भणिय, जाणूहिं ठाउं वद्धमाणक्खरस्सरा तिन्निथुई उ पढिय, सक्कत्थयं थुत्तं च भणिय, आयरियाई वंदिय, पायच्छित्त-विसोहणत्थं काउस्सग्गं काउं उज्जोय चउक्कं चिंतेइ त्ति।

१. दैवसिकप्रतिक्रमण विधि-

सर्वप्रथम श्रावक, गुरु महाराज के साथ अथवा अकेला ही 'जावंतिचेइयाइं' और 'जावंतकेविसाहू' सूत्र एवं 'स्तुति प्रणिधान सूत्र'[1] को छोड़कर चैत्यादि[2] का वंदन करता है। फिर चार बार 'खमासमणसूत्र' पूर्वक आचार्य-उपाध्याय-वर्तमान साधु आदि को वन्दन करता है, फिर भूमितल पर मस्तक रखकर 'सव्वस्सवि देवसिय सूत्र'[3] के उच्चारण पूर्वक सकल अतिचारों का मिच्छामि दुक्कडं देता है।

प्रथम सामायिक एवं द्वितीय चतुर्विंशतिस्तव आवश्यक- उसके बाद प्रतिक्रमण करने वाला साधक खड़े होकर सामायिक सूत्र[4] बोलता है, फिर 'इच्छामि ठामि काउस्सग्गं'[5] इत्यादि सूत्र को कहकर कायोत्सर्ग करता है। कायोत्सर्ग के समय दोनों भुजाओं को लम्बी कर, कोहनियों से कटिवस्त्र-चोलपट्टा या धोती को पकड़कर रख सके उस प्रकार से नाभि से चार अंगुल नीचे और घुटनों से चार अंगुल ऊपर कटिवस्त्र धारण करता है। कायोत्सर्ग संयति-कपिष्ठ आदि १९ दोषों से रहित होकर करना चाहिए। इस कायोत्सर्ग में दिनकृत अतिचारों को हृदय में धारण (याद)[6] करता है। उसके बाद 'णमो अरिहंताणं' शब्दपूर्वक कायोत्सर्ग पूर्ण कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चतुर्विंशतिस्तव सूत्र'[9] बोलता है।

तृतीय वन्दन आवश्यक- उसके बाद संडाशक स्थानों[8] की प्रमार्जना कर और नीचे बैठकर दोनों भुजाओं से शरीर का स्पर्श न करता हुआ, पच्चीस बोल पूर्वक मुखवस्त्रिका की प्रतिलेखना करता है। उसी प्रकार पच्चीस बोल पूर्वक शरीर की प्रतिलेखना करता है। यहाँ श्राविका वर्ग दोनों स्कन्ध मस्तक एवं हृदय इन तीन स्थानों के दस बोलों को छोड़कर पन्द्रह बोलपूर्वक ही शरीर की प्रतिलेखना करता है। इसके बाद उस स्थान से खड़े होकर बत्तीस दोष रहित और पच्चीस आवश्यक की शुद्धिपूर्वक कृतिकर्म (द्वादशावर्त्तवन्दन) करता है।

दैवसिक अतिचारों की आलोचना एवं चतुर्थ प्रतिक्रमण आवश्यक- फिर मस्तक सहित शरीर को कुछ झुकाकर और करयुगल में विधिपूर्वक मुखवस्त्रिका को धारणकर, दैवसिक अतिचारों को गुरु के समक्ष प्रकट करने के लिए आलोचना सूत्र[9] बोलता है। उसके बाद मुखवस्त्रिका के द्वारा काष्ठासन अथवा पादप्रोञ्छन की प्रतिलेखना करता है तथा बाँये घुटने को नीचे कर और दाहिने घुटने को ऊँचा करके, दोनों हाथों में मुखवस्त्रिका को धारणकर सम्यक् प्रकार से प्रतिक्रमण सूत्र बोलता है। प्रतिक्रमण सूत्र[10] की ४३ वीं गाथा में 'अब्भुट्ठिओमि आराहणाए' के पाठ से लेकर शेष सूत्र को द्रव्य और भाव से खड़े होकर पढ़ता है। उसके बाद पूर्ववत् द्वादशावर्त्तवन्दन करता है, फिर प्रतिक्रमण मण्डली में पाँच आदि साधु हों तो तीन साधुओं से 'अब्भुट्ठिओमि सूत्र' पूर्वक क्षमायाचना करता है तथा शेष साधुओं से स्थापनाचार्य के वन्दन के साथ क्षमायाचना करता है।

पंचम कायोत्सर्ग आवश्यक- पुनः पच्चीस आवश्यक की शुद्धिपूर्वक कृतिकर्म (द्वादशावर्त्तवन्दन) करता है, फिर खड़े होकर मस्तक पर अंजलि किया हुआ 'आयरिय-उवज्झाय सूत्र' की तीन गाथा बोलता है। उसके बाद 'सामायिक सूत्र' और 'कायोत्सर्ग सूत्र'[11] को बोलकर, कायोत्सर्ग में चारित्रातिचार की शुद्धि निमित्त दो 'लोगस्स सूत्र' का चिन्तन करता है। उसके बाद गुरु महाराज के द्वारा कायोत्सर्ग पूर्ण किये जाने पर स्वयं कायोत्सर्ग को पूर्ण करता है। फिर 'लोगस्स सूत्र' सव्वलोए 'अरिहंतचेइयाणंसूत्र' 'अन्नत्थ सूत्र' बोलकर सम्यक्त्व की शुद्धि हेतु कायोत्सर्ग में एक 'लोगस्स सूत्र' का चिन्तन करता है। फिर पुक्खरवरदीसूत्र[12] और 'अन्नत्थसूत्र' कहकर सूत्र की शुद्धि निमित्त पच्चीस श्वासोच्छ्वास (चंदेसु निम्मलयरा) तक का कायोत्सर्ग कर पूर्ण करता है। इसके पश्चात् 'सिद्धस्तव सूत्र'[13] बोलकर श्रुतदेवता के कायोत्सर्ग में एक 'नमस्कार मंत्र' का चिन्तन कर श्रुतदेवता[14] की स्तुति बोलता है अथवा सुनता है। इसी प्रकार क्षेत्रदेवता[15] की आराधना निमित्त उसके कायोत्सर्ग में भी एक 'नमस्कार मंत्र' का चिन्तन कर फिर कायोत्सर्ग पूर्णकर क्षेत्रदेवता की स्तुति बोलता है अथवा सुनता है। उसके बाद पुनः प्रकट में एक 'नमस्कार मंत्र' कहता है।

षष्ठ प्रत्याख्यान आवश्यक- फिर संडाशक स्थानों को प्रमार्जित कर तथा नीचे बैठकर पूर्ववत् ही पच्चीस बोल पूर्वक मुखवस्त्रिका और शरीर की प्रतिलेखना कर द्वादशावर्त्त करता है। फिर 'इच्छामो अणुसट्ठिं' इतना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोलकर पुनः बाँये घुटने के बल बैठकर वर्द्धमान अक्षर और स्वर वाली अर्थात् जिसमें अक्षर और स्वर बढ़ते हुए हों वैसी तीन स्तुति[16] बोलता है।

२. पक्खियपडिक्कमणविही-

पक्खियपडिक्कमणं पुण चउद्दसीए कायव्वं। तत्थ 'अब्भुट्ठिओमि आराहणाए' इच्चाइसुत्तंतं देवसियं पडिक्कमिय, तओ खमासमणदुगेण पक्खियमुहपोत्तिं पडिलेहिय, पक्खियाभिलावेणं वंदणं दाउं, संबुद्धाखामणं काउं, उट्ठिय पक्खियालोयण सुत्तं। 'सव्वस्स वि पक्खिय'इच्चाइपज्जंतं पढिय, वंदणं दाउं भणइ- 'देवसियं आलोइयं, पडिक्कंतं पत्तेयखामणेणं अब्भुट्ठिओऽहं अब्भिंतरपक्खियं खामेमि' त्ति भणित्ता, आहारायणियाए साहू सावए य खामेइ, मिच्छुक्कडं दाउं सुहतवं पुच्छेइ, सुहपक्खियं च साहुणमेव पुच्छेइ न सावयाणं। तओ जहामंडलीए ठाउं वंदणं दाउं भणइ- 'देवसियं आलोइयं पडिक्कंतं, पक्खियं पडिक्कमावेह।' तओ गुरुणा- 'सम्मं पडिक्कमणं' त्ति भणिए, इच्छंति भणिय, सामाइयसुत्तं उस्सग्गसुत्तं च भणिय, खमासमणेण 'पक्खियसुत्तं संदिसावेमि' खमासमणेण 'पक्खियसुत्तं कड्ढेमि' त्ति भणित्ता, नमोक्कारतिगं कड्ढिय पडिक्कमणसुत्तं भणइ। जे य सुणंति ते उस्सग्गसुत्ताणंतरं 'तस्सुत्तरीकरणेणं' ति तिदंडगं पढिय काउस्सग्गे ठंति। सुत्तसमत्तीए उद्धट्ठिओ नवकारतिगं भणिय, उवविसिय, नमोक्कार-सामाइयतिगपुव्वं 'इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे पक्खिओ अइयारो कओ' इच्चाइदंडगं पढिय, सुत्तं भणित्ता, उट्ठिय अब्भुट्ठिओमि आराहणाए 'त्ति दडगं पढित्ता, खमासमणं दाउं 'मूलगुण-उत्तरगुण-अइयार-विसोहणत्थं करेमि काउस्सग्ग' त्ति भणिय 'करेमि भंते' इच्चाइ, इच्छामि ठामि काउस्सग्ग' मिच्चाइदंडयं च पढित्ता, काउस्सग्गं काउं बारसुज्जोए चिंतेइ। तओ पारित्ता, उज्जोयं भणित्ता, मुहपोत्तिं पडिलेहिय, वंदणं दाउं समत्तिखामणं काउं चउहिं छोभवंदणगेहिं तिन्नि तिन्नि नमोक्कारे, भूनिहियसिरो भणेइ त्ति। तओ देवसियसेसं पडिक्कमइ। नवरं सुयदेवयाथुइअणंतरं भवणदेवयाए काउस्सग्गे नमोक्कारं चिंतिय, तीसे थुइं देइ सुणेइ वा। थुत्तं च अजियसंतित्थओ। एवं चाउम्मासिय संवच्छरिया वि पडिक्कमणा तदभिलावेण नेयव्वा। नवरं जत्थ पक्खिए बारसुज्जोया चिंतिज्जंति, तत्थ चाउम्मासिए वीसं, संवच्छरिए चालीसं पंचमंगलं च। तहा पक्खिए पणगाइसु जइसु तिण्हं संबुद्ध-खामणाणं, चाउम्मासिए सत्ताइसु पंचण्हं संवच्छरिए नवाइसु सत्तण्हं। दुगमाईनियमा सेसे कुज्ज त्ति भावत्थो। तहा संवच्छरिए भवणदेवयाकाउस्सग्गो न कीरइ न य थुई। असज्झाइयकाउसग्गो न कीरइ। तहा राइय-देवसिएसु 'इच्छामोऽणुसट्ठिंत्ति भणणाणंतरं गुरुणा पढमथुईए भणियाए मत्थए अंजलिं काउं 'नमो खमासमणाणं' ति भणिय, मत्थए अंजलिपग्गहमित्तं वा काउं इयरे तिन्नि थुईओ भणंति। पक्खिए पुण नियमा गुरुणा थुइतिगे पूरिए, तओ सेसा अणुकड्ढंति त्ति।

२. पाक्षिक प्रतिक्रमण विधि

पाक्षिक प्रतिक्रमण को चतुर्दशी के दिन करना चाहिए। पाक्षिक प्रतिक्रमण करने के लिए 'अब्भुट्ठिओमि आराहणाए' इत्यादि सूत्र तक दैवसिक प्रतिक्रमण के समान ही करना चाहिए। उसके बाद दो प्रतिक्रमण करने वाला 'खमासमण सूत्र' पूर्वक वंदन करके पाक्षिक प्रतिक्रमण में प्रवेश करने के लिये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुखवस्त्रिका को प्रतिलेखित करता है।

संबुद्धा (विशिष्ट ज्ञानप्राप्त गुरुजनों से) क्षमायाचना-इसके पश्चात् पाक्षिक आलापक (वचन) से द्वादशावर्त्तवन्दन करके 'संबुद्धाखामणा'[१७] अर्थात् विशिष्ट ज्ञानी गुरुओं से क्षमायाचना करता है।

पाक्षिक आलोचना एवं प्रत्येक क्षमायाचना- उसके बाद प्रतिक्रमण करने वाला आराधक आसन से उठकर, पाक्षिक आलोचना सूत्र[१८] 'सव्वस्सवि पक्खिय' इत्यादि पर्यन्त पढ़कर फिर द्वादशावर्त्तवन्दन देकर कहता है- 'दिवस संबंधी पापों की आलोचना का प्रतिक्रमण करते हुए, प्रत्येक को क्षमायाचना करने के लिए मैं उपस्थित हुआ हूँ; और अन्तःकरण पूर्वक पक्ष संबंधी दोषों की क्षमायाचना करता हूँ' इतना बोलकर यथारात्निक (बड़े-छोटे के) क्रम से प्रत्येक साधु और श्रावक से क्षमायाचना[१९] करता है। फिर कृत दोषों का मिथ्या दृष्कृत देकर, तप[२०] (तपस्वी) की सुखसाता पूछता है और पाक्षिक सुखपृच्छा साधुओं से ही करता है, श्रावकों से नहीं।

पाक्षिक प्रतिक्रमण- उसके बाद यथोचित मण्डली में स्थित होकर 'द्वादशावर्त्तवन्दन' देकर प्रतिक्रमण करने वाला शिष्य बोलता है- 'दिवस संबंधी आलोचना का प्रतिक्रमण करते हुए पक्ष संबंधी पापों की शुद्धि निमित्त पाक्षिक प्रतिक्रमण करवाइये।' उसके बाद गुरु द्वारा 'तुम सम्यक् प्रकार से प्रतिक्रमण करो' ऐसा कहे जाने पर शिष्य 'ऐसी ही इच्छा करता हूँ' इतना बोलकर फिर 'सामायिक सूत्र'[२१] और 'उत्सर्गसूत्र'[२२] बोलता है। पुनः एक 'खमासमण सूत्र' पूर्वक वंदन करके कहता है- 'पाक्षिक सूत्र' बोलने की अनुमति लेता हूँ। पुनः दूसरे 'खमासमण सूत्र' पूर्वक वंदन करके 'पाक्षिक सूत्र कहता हूँ' ऐसा कहकर तीन बार 'नमस्कार मंत्र' को बोलकर 'प्रतिक्रमण सूत्र'[२३] कहता है और जो प्रतिक्रमण सूत्र सुनते हैं वे 'उत्सर्ग सूत्र' के बाद ही तस्सउत्तरीकरणेणं आदि तीन पाठ (करेमि भंते, इच्छामि ठामि, तस्सउत्तरी) बोलकर कायोत्सर्ग में स्थित हो जाते हैं।

तदनन्तर 'पाक्षिक सूत्र' समाप्त होने पर, ऊर्ध्व स्थित (खड़ा) ही रहकर तीन 'नमस्कार मंत्र' बोलता है। फिर नीचे बैठकर तीन 'नमस्कार मंत्र' व तीन बार 'सामायिक सूत्र' के उच्चारण पूर्वक 'इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे पक्खिओ अइयारो कओ'' इत्यादि पाठ को पढ़कर वंदित्तु सूत्र बोलता है। उसके बाद खड़े होकर 'आराधना के लिए उपस्थित हुआ हूँ' यहाँ से लेकर 'वंदित्तु सूत्र' की अंतिम गाथा तक पढ़ता है। पश्चात् एक 'खमासमण सूत्र' पूर्वक वंदन करके 'मूलगुण-उत्तरगुण में लगे हुए अतिचारों की विशुद्धि करने के लिए कायोत्सर्ग करता हूँ' ऐसा बोलकर 'करेमि भंते' इत्यादि और 'इच्छामि ठामि काउस्सग्गं' इत्यादि सूत्र पढ़कर कायोत्सर्ग में बारह 'उद्योतकर सूत्र'[२४] का चिन्तन करता है। उसके बाद कायोत्सर्ग पूर्ण कर, 'उद्योतकर सूत्र' बोलकर पाक्षिक प्रतिक्रमण की निर्विघ्न समाप्ति के निमित्त मुखवस्त्रिका को प्रतिलेखित कर, द्वादशावर्त वन्दन करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थोभवन्दन क्षमायाचना- पाक्षिक प्रतिक्रमण की समाप्ति के निमित्त क्षमायाचना करने के लिए, चार थोभवंदन[25] के द्वारा, तीन-तीन 'नमस्कार मंत्र' को भूमि पर मस्तक रखकर बोलता है। उसके बाद दैवसिक का शेष प्रतिक्रमण करता है।

पाक्षिक प्रतिक्रमण की विशेष विधि- यहाँ (पाक्षिक प्रतिक्रमण के बाद, दैवसिक प्रतिक्रमण करते हुए) विशेष इतना ध्यान रखना चाहिए कि श्रुतदेवता[26] की स्तुति करने के बाद 'भुवन देवता' के कायोत्सर्ग में 'नमस्कार मंत्र' का चिन्तन कर भुवन देवता की ही स्तुति बोलते हैं अथवा सुनते हैं और स्तोत्र के स्थान पर 'अजितशांतिस्तव' बोलते हैं। इस प्रकार चातुर्मासिक और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण की विधि भी उस-उस आलापक से जाननी चाहिए।

कायोत्सर्ग के संबंध में- विशेष यह है कि जहाँ पाक्षिक प्रतिक्रमण में बारह 'उद्योतकर सूत्र' का चिंतन किया जाता है वहाँ चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में बीस 'लोगस्स सूत्र' का और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में चालीस 'लोगस्स सूत्र' और ऊपर एक 'नमस्कार मंत्र' का चिन्तन किया जाता है।

क्षमायाचना के संबंध में- जहाँ पाक्षिक प्रतिक्रमण की मंडली में पाँच आदि साधुओं के होने पर तीन के साथ संबुद्धा क्षमायाचना करने की परम्परा है, वहाँ चातुर्मासिक प्रतिक्रमण की मंडली में सात आदि साधु होने पर पाँच के साथ और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण की मंडली में, नव आदि साधु होने पर सात के साथ संबुद्धा क्षमायाचना करने की परम्परा है। नियम से दो साधु आदि शेष रखने चाहिए ऐसा भावार्थ है। सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में भुवनदेवता का कायोत्सर्ग नहीं किया जाता है और न ही स्तुति बोली जाती है। अस्वाध्याय का कायोत्सर्ग भी नहीं किया जाता है। रात्रिक व दैवसिक प्रतिक्रमण में 'इच्छामोऽणुसट्ठिं' यह बोलने के बाद एवं गुरु द्वारा प्रथम स्तुति बोले जाने के बाद शेष साधु मस्तक पर अंजलि करके, 'नमो खमासमणाणं' यह कहकर अथवा मस्तक पर हाथ जोड़कर वर्द्धमान की तीन स्तुतियाँ बोलते है। पुनः पाक्षिक प्रतिक्रमण में नियम से गुरु द्वारा तीन स्तुतियाँ पूर्ण करने के बाद शेष साधु वर्द्धमान की तीन स्तुतियों का अनुसरण करते हैं अर्थात् बोलते हैं।

३. देवसियपडिक्कमणसेसविही

देवसियपडिक्कमणे पच्छित्तउस्सग्गाणंतरं खुद्दोवद्दवओहडावणियं सयउस्सासं काउस्सग्गं काउं, तओ खमासमणदुगेण सज्झायं संदिसाविय जाणुट्ठियो नवकारतिगं कड्ढिय विग्घावहरणत्थं सिरिपासनाहनमोक्कारं सक्कत्थयं 'जावंति चेइयाइं' ति गाहं च भणित्तु, खमासमणपुव्वं। 'जावंत केइ साहू' इति गाहं पासनाहथवं च जोगमुद्दाए पढित्ता, पणिहाणगाहादुगं च मुत्तामेत्तिमुद्दाए भणिय, खमासमणपुव्वं भूमिनिहितसिरो, 'सिरिथंभणयट्ठियपाससामिणो' इच्चाइगाहादुगमुच्चरित्ता, 'वंदणवत्तियाए' इच्चाइदंडगपुव्वं चउ लोगुज्जोयगरियं काउस्सग्गं काउं चउवीसत्थयं पढंति त्ति पडिक्कमणविहिसेसो पुव्वपुरिससंताण-क्कमागओ, 'आयरणा वि हु आण' त्ति वयणाओ कायव्वो चेव। जहा थुइतिगभणणाणंतरं सक्कत्थव-थुत्त-पच्छित्त-उस्सग्गा। पुव्वं हि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरुथुइगहणे थुइतिन्नि त्ति पज्जंतमेव पडिक्कमणमासि। अओ चेव थुइतिगे कड्ढिए छिंदणे वि न दोसो। छिंदणं ति वा अंतरणि त्ति वा अग्गलि त्ति वा एगट्ठा। छिंदणं व दुहा- अप्पकयं, परकयं च। तत्थ अप्पकयं अप्पणो अंगपरियत्तणेण भवइ। परकयं जया परो छिंदइ।

पक्खिय पडिक्कमणे पत्तेयखामणं कुणंताणं पुढोकयआलोयणं मुत्तुं नत्थि छिंदणदोसो। अओ चेव अम्ह सामायारीए मुहपोत्तिया पत्तेयखामणा-णंतरं न पडिलेहिज्जइ त्ति। जया य मज्जारिया छिंदइ तया-

जा सा करडी कब्बरी अंखिहिं कक्कडियारि।
मंडलिमाहिं संचरीय हय पडिहय मज्जारि-त्ति।।१।।

चउत्थपयं वारतिगं भणिय, खुद्दोपद्दवओहडावणियं काउसग्गो कायव्वो। सिरिसंतिनाहनमोक्कारो घोसेयव्वो। कारणंतरेण पुढोपडिकंता पुढोकय आलोयणा वा पडिकमणानंतरं गुरुणो वंदणं दाउं, आलोयण-खामण-पच्चक्खाणाइं कुणंति। पडिक्कमणं च पुव्वाभिमुहेण उत्तराभिमुहेण वा।।

आयरिया इह पुरओ, दो पच्छा तिन्नि तयणु दो तत्तो।
तेहिं पि पुणो इक्को, नवगणमाणा इमा रयणा।।१।।

इइगाहा भणियसिरिवच्छाकारमंडलीए कायव्वं। श्रीवत्सस्थापना चेयम्- तत्थ देवसियं पडिक्कमणं रयणिपढमपहरं जाव सुज्झइ। राइयं पुण आवस्सयचुण्णिअभिप्पाएण उग्घाडपोरिसिं जाव, ववहारभिप्पाएण पुण पुरिमड्ढं जाव सुज्झइ।

जो वट्टमाणमासो तस्स य मासस्स होइ जो तइओ।
तन्नामयनक्खत्ते सीसत्थे गोसपडिक्कमणं।।

३. दैवसिक प्रतिक्रमण में प्रक्षेप की गई विधि-

जिनप्रभसूरि कहते हैं कि दैवसिक प्रतिक्रमण में, प्रायश्चित्त संबंधी अर्थात् ''दैवसिक प्रायश्चित्त की विशुद्धि निमित्त किया जाने वाला कायोत्सर्ग करने के बाद 'क्षुद्र उपद्रव (तुच्छ उपद्रव) को दूर करने के निमित्त' सौ श्वासोच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करना चाहिए। उसके बाद दो बार 'खमासमण सूत्र' पूर्वक वंदन करके स्वाध्याय करने की अनुमति ग्रहण कर, फिर घुटने के बल स्थित होकर स्वाध्याय रूप 'नमस्कार मंत्र' तीन बार बोलना चाहिए। उसके बाद विघ्नों को दूर करने के लिए 'श्री पार्श्वनाथ नमस्कार स्तोत्र'[२७] 'शक्रस्तव सूत्र'[२८] और 'जावंति चेइयाइं' इतना गाथापाठ बोलकर, एक खमासमणा पूर्वक 'जावंत केविसाहू' यह गाथा और पार्श्वनाथ का स्तव''[२९] योगमुद्रा से पढ़ना चाहिए और प्रणिधान की गाथा युगल को मुक्तासूक्ति मुद्रा से बोलना चाहिए। पश्चात् 'खमासमण' पूर्वक भूमि पर सिर झुकाकर 'सिरिथंभणयपुरट्ठियपाससामिणो' इत्यादि दो गाथाएँ बोलकर, 'वंदणवत्तियाए' इत्यादि दण्डक पाठ पूर्वक, चार बार 'लोक उद्योतकरसूत्र' का कायोत्सर्ग करके, प्रकट में 'चतुर्विंशतिस्तव' को बोलना चाहिए। इस प्रकार यह प्रतिक्रमण की शेष विधि पूर्व पुरुषों की शिष्य परम्परा के क्रम से आचरित होकर आई है तथा 'आचरण ही निश्चय से आज्ञा है' इस वचन से शेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विधि भी करनी ही चाहिए। जैसाकि वर्द्धमान स्वामी की तीन स्तुति के बाद 'शक्रस्तवस्तोत्र'[30] बोलते हैं और दैवसिक प्रायश्चित्त का कायोत्सर्ग करते हैं।

पूर्वकाल में वर्द्धमान स्वामी की जो स्तुति बोली जाती है उन तीन स्तुति पर्यन्त ही प्रतिक्रमण था और इसलिए ही प्रतिक्रमण में तीन स्तुति कहे जाने के बाद किसी प्रकार का व्यवधान होने पर भी दोष नहीं माना जाता है।

छिन्दन का अर्थ- व्यवधान के अर्थ में छिन्दन शब्द का प्रयोग है।

१. **छिन्दन-** खण्डन करना, क्रियानुष्ठान में विक्षेप करना अथवा

२. **अंतरणि-** व्यवधान करना, अथवा

३. **अग्गलि-** अर्गलि बन्द करना, विघ्न आगमन का संकेत करना ये तीनों ही शब्द एकार्थ सूचक हैं।

छिन्दन के प्रकार- छिन्दन दो प्रकार का होता है १.-आत्मकृत २. परकृत।

१. **आत्मकृत-** अपने ही अंग परिवर्तन से जो आड़ होती है अर्थात् अपने शारीरिक अंग आदि का बीच में चलना 'आत्मकृत छिन्दन' है।

२. **परकृत-** मार्जारी आदि अन्य प्राणी का बीच में होकर अर्थात् स्थापनाचार्य आदि मुख्यस्थापना व आराधक के बीच में होकर निकलने से जो आड़ होती है, वह 'परकृत छिन्दन' है।

छिन्दन कब और कहाँ?

पाक्षिक प्रतिक्रमण में- प्रत्येक क्षमायाचना करते हैं (जो पृथक् रूप से आलोचना किये हुए है उस) पृथक् कृत (अर्थात् एकाकी या अलग से प्रतिक्रमण करने वाले) आलोचक को छोड़कर (किसी का) छिन्दन दोष नहीं होता है। और इसलिए ही समाचारी में प्रत्येक क्षमायाचना करने के बाद मुखवस्त्रिका प्रतिलेखित नहीं की जाती है।

बिल्लीदोषनिवारण विधि- जब मार्जारी (बिल्ली) की प्रतिक्रमणादि क्रियाओं में आड़ होती है तब दोष निवारण के लिए निम्न गाथा बोलते हैं, वह इस प्रकार है-

गाथार्थ- जो मार्जारी, कबडी, आँखों से कर्कश, कठोर है, वह चितकबरी (मार्जारी) मंडली के अन्दर संचरित हुई हों, (प्रवेश कर गई हों) तो उससे होने वाले दोषों का नाश हो, विशेष रूप से नाश हो।

उपर्युक्त गाथा का चौथा पद तीन बार बोलकर, क्षुद्रोपद्रव को दूर करने के लिए कायोत्सर्ग करना चाहिए फिर 'श्री शांतिनाथ भगवान् को नमस्कार हो' ऐसी (बुलन्द आवाज में) घोषणा करनी चाहिए।

प्रतिक्रमण संबंधी विशेष कथन- चाहे श्रावक हो या साधु, कारण विशेष से जिन्होंने मंडली से पृथक् प्रतिक्रमण किया हो अथवा पृथक् रूप से आलोचना की हो, वे प्रतिक्रमण करने के तुरन्त बाद गुरु को वन्दन करके, आलोचना, क्षमायाचना और प्रत्याख्यानादि करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिक्रमणदिशा-निर्देश- प्रतिक्रमण पूर्वाभिमुख होकर अर्थात् पूर्व दिशा की ओर मुख करके अथवा उत्तर दिशा की ओर मुख करके करना चाहिए।

प्रतिक्रमण मण्डलीस्थापना विधि- प्रतिक्रमण करने वाले श्रमणों की मंडली 'श्रीवत्साकार' के समान होनी चाहिए। श्री वत्साकार मंडली स्थापना की विधि इस प्रकार है-

गाथार्थ- यहाँ पर मंडली में आचार्य सबसे आगे बैठें, फिर आचार्य के पीछे दो साधु बैठें, दो के पीछे तीन साधु, तीन के पीछे फिर दो साधु पुनः दो के बाद एक साधु इस प्रकार नवगण समूह परिमाण की यह रचना होती है। इस गाथा में कही गई 'श्री वत्साकार मंडली' विधि पूर्वक करनी चाहिए। 'श्रीवत्सस्थापना' इस प्रकार है-

दैवसिक व रात्रिक प्रतिक्रमण का काल- यहाँ प्रतिक्रमण के विषय में कहा गया है कि दैवसिक प्रतिक्रमण रात्रि के प्रथम प्रहर तक करने पर भी शुद्ध होता है। रात्रि प्रतिक्रमण 'आवश्यक चूर्णि' के अभिप्राय से उग्घाडा पौरुषी (दिन की छह घड़ी) तक करने पर भी शुद्ध होता है और 'व्यवहार सूत्र' के अभिप्राय से पुरिमड्ढ (दिन का आधा भाग व्यतीत होने) तक, करने पर भी शुद्ध होता है।

गाथार्थ- विधिमार्गप्रपा में रात्रिक प्रतिक्रमण कब करना चाहिए उस संबंध में कहा गया है कि जो वर्तमान का मास चल रहा हो, उससे तीसरे मास के नाम का नक्षत्र मस्तक पर आये तब रात्रिक प्रतिक्रमण करना चाहिए अर्थात् जैसे वर्तमान में श्रावण मास चल रहा है तो आश्विन मास में तीसरा मास होता है तब आश्विनी नाम का नक्षत्र मध्याकाश में आये उस समय रात्रिक प्रतिक्रमण का समय समझना चाहिए।

४. राइयपडिक्कमणविही

राइयपडिक्कमणे पुण आयरियाई वंदिय भूनिहियसिरो 'सव्वस्स वि राइय' इच्चाइदंडगं पढिय सक्कत्थयं भणित्ता, उट्ठिय, सामाइय-उस्सग्गसुत्ताइं पढिय, उस्सग्गे उज्जोयं चिंतिय पारिय, तमेव पढित्ता, बीये उस्सग्गे तमेव चिंतिता सुयत्थयं पढित्ता; तईए, जहक्कमं निसाइयारं चिंतित्ता, सिद्धत्थयं पढित्ता, संडासए पमज्जिय, उवविसिय, पुत्तिं पेहिय, वंदणं दाउं, पुव्विं व आलोयणसुत्त-पढण-वंदणय-खामणय-वंदणय-गाहातिगपढण-उस्सग्गसुत्तउच्चारणाइं काउं छाम्मासिय-काउस्सग्गं करेइ। तत्थ य इमं चिंतेइ-''सिरिवद्ध-माणतित्थे छम्मासियो तवो वट्टइ। तं ताव काउं अहं न सकुणोमि। एवं एगाइएगूणतीसंतदिणूणं पि न सकुणोमि। एवं पंच-चउ-ति-दु-मासे वि न सकुणोमि। एवं एगमासं पि जाव तेरसदिणूणं न सकुणोमि।'' तओ चउतीस-बत्तीसमाइकमेण हाविंतो जाव चउत्थं आयंबिलं निव्वियं एगासणाइ पोरिसिं नमोक्कारसहियं वा जं सक्केइ तेण पारेइ। तओ उज्जोयं पढिय, पुत्तिं पेहिय, वंदणं दाउं, काउस्सग्गे जं चिंतियं तं चिय गुरु-वयणमणुभणिंतो सय वा पच्चक्खाइ। तो 'इच्छामोणुसट्ठिं' त्ति भणंतो जाणूहिं ठाउं तिन्नि वड्ढमाणथुईओ पढित्ता मिउसद्देणं सक्कत्थयं पढिय, उट्ठिय 'अरहंतचेइयाणं' इच्चाइपढिय, थुइचउक्केणं चेइए वंदेइ। 'जावंति चेइयाइं' इच्चाइगाहादुगथुत्तं पणिहाणगाहाओ न भणेइ। तओ आयरियाई वंदेइ। तओ वेलाए पडिलेहणाइ करेइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्ति।।

४. रात्रिक प्रतिक्रमण विधि

रात्रिक प्रतिक्रमण विधि में सर्वप्रथम 'खमासमण सूत्र' पूर्वक आचार्यादि चार को वन्दन करता है। फिर मस्तक को भूमितल पर स्थित करके 'सव्वस्स वि राइय' 'प्रतिक्रमण स्थापना सूत्र' बोलता है। फिर 'शक्रस्तवसूत्र'[३१] कहता है।

प्रथम सामायिक एवं दूसरा चतुर्विंशतिस्तव आवश्यक- उसके बाद आसन से खड़े होकर सामायिकसूत्र[३२] कायोत्सर्गसूत्रादि[३३] को बोलकर कायोत्सर्ग में एक 'उद्योतकर सूत्र'[३४] का चिन्तन करता है। फिर कायोत्सर्ग पूर्ण कर प्रकट में 'उद्योतकर सूत्र' को बोलकर दूसरे कायोत्सर्ग में पुनः एक 'लोगस्स सूत्र' का चिन्तन करता है। फिर 'श्रुतस्तवसूत्र'[३५] बोलकर तीसरे कायोत्सर्ग में यथाक्रम से रात्रि में लगे हुए अतिचारों का चिन्तन करता है। अनन्तर 'सिद्धस्तवसूत्र'[३६] कहता है।

तीसरा वन्दन एवं चौथा प्रतिक्रमण आवश्यक- उसके बाद रात्रिक प्रतिक्रमण करने वाला साधक संडाशक स्थानों को प्रमार्जित कर, फिर नीचे बैठकर मुखवस्त्रिका की (२५ बोल पूर्वक) प्रतिलेखना करता है। फिर स्थापनाचार्य जी को द्वादशावर्त्तवन्दन करता है। तत्पश्चात् दैवसिक प्रतिक्रमण के अनुसार क्रमशः 'आलोचना सूत्र'[३७] पढ़ता है; गुरु के समक्ष रात्रिकृत अतिचारों को प्रकट करता है, वंदित्तुसूत्र बोलता है, द्वादशावर्त्तवन्दन करता है और तीन आदि साधुओं से 'अब्भुट्ठिओमिसूत्र' पूर्वक क्षमायाचना करता है।

पाँचवां कायोत्सर्ग आवश्यक- उसके बाद पुनः द्वादशावर्त्तवन्दन करता है, खड़े होकर 'आयरियउवज्झायसूत्र' की तीन गाथा बोलता है और 'कायोत्सर्ग सूत्र' आदि को प्रगट में बोलकर छह मासिक कायोत्सर्ग करता है। उस कायोत्सर्ग में इस प्रकार का चिन्तन करता है- श्री वर्द्धमान स्वामी के तीर्थ में छह मासिक तप वर्तता है उस तप को मैं छह मास के लिए नहीं कर सकता हूँ। इस प्रकार एक-एक दिन कम करता हुआ उनतीस दिन कम छह मास का तप भी नहीं कर सकता हूँ। इसी प्रकार पाँच, चार, तीन, दो मास का तप भी नहीं कर सकता हूँ। इसी प्रकार एक मास, एक मास में तेरह दिन कम का भी तप नहीं कर सकता हूँ। उसके बाद चौंतीस भक्त-१६ उपवास, बत्तीस भक्त-१५ उपवास आदि के क्रम से कम करता हुआ उपवास, आयंबिल, नीवी, एकासन आदि पौरुषी अथवा नवकारसी तक में से जिस तप को कर सकता है, उस तप के अवधारण पूर्वक कायोत्सर्ग पूर्ण करता है। उसके बाद प्रकट में 'उद्योतकर सूत्र' बोलता है।

छठा प्रत्याख्यान आवश्यक- इसके बाद मुखवस्त्रिका को प्रतिलेखित कर द्वादशावर्त्तवन्दन करता है। फिर उक्त कायोत्सर्ग में जिस तप को करने का चिन्तन किया था, उस तप के प्रत्याख्यान को गुरु वचन से बुलवाते हुए ग्रहण करता है अथवा स्वयं ही वह प्रत्याख्यान[३८] करता है। उसके बाद 'इच्छामो अणुसट्ठिं' "मैं आपके अनुशिक्षण की इच्छा करता हूँ।" ऐसा बोलते हुए बाँये घुटने के बल बैठकर अर्थात् बाँये घुटने को खड़ा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करके बढ़ते हुए अक्षर और स्वरवाली तीन स्तुतियाँ[१६] बोलता है। फिर मृदुस्वर से 'शक्रस्तवसूत्र' बोलकर फिर खड़े होकर 'अरिहंत चेइयाणं' इत्यादि सूत्र बोलकर चार स्तुति पूर्वक चैत्यवन्दन (देववन्दन) करता है। यहाँ चैत्यवंदन के समय 'जावंतिचेइयाइंसूत्र' 'जावंत केविसाहूसूत्र' और 'प्रणिधान सूत्र' को नहीं बोलते हैं। तदनन्तर खमासमणसूत्र पूर्वक आचार्यादि को वन्दन करता है। फिर समय होने पर वस्त्र, वसति आदि की प्रतिलेखना करता है।

संदर्भ (पाद टिप्पण)

१. जयवीय सूत्र
२. यहाँ चैत्यादि का अर्थ चैत्यवन्दन के साथ चार स्तुतिपूर्वक देववन्दना करना है।
३. प्रतिक्रमण स्थापना सूत्र
४. करेमि भंते सूत्र
५. इस सूत्र का दूसरा नाम 'अतिचार बीजक सूत्र' है।
६. यहाँ खरतरगच्छ की वर्तमान परम्परा में साधु-साध्वी 'सयणासणन्नपाणे' की गाथा एवं गृहस्थ आठ नवकार का चिन्तन करते हैं जबकि तपागच्छ परम्परा में साधु-साध्वी 'सयणासणन्नपाणे' की गाथा एवं गृहस्थ अतिचार की आठ गाथाएँ अथवा आठ नवकार का चिन्तन करते हैं।
७. लोगस्स सूत्र
८. शरीर के संधिस्थल संबंधी १७ स्थान।
९. इच्छामि ठामि सूत्र
१०. वंदित्तुसूत्र
११. इच्छामि ठामि सूत्र
१२. श्रुतस्तव सूत्र
१३. सिद्धाणं बुद्धाणं सूत्र
१४. यहाँ खरतरगच्छ परम्परा में 'सुवर्णशालिनी' तपागच्छ परम्परा में पुरुषवर्ग 'सुयदेवयाभगवई' एवं श्राविकावर्ग 'कमलदलविपुलः' की स्तुति बोलते हैं।
१५. यहाँ वर्तमान की खरतरगच्छ परम्परा में 'यासां क्षेत्रगताः' तपागच्छ परम्परा में पुरुषवर्ग 'जिसे खित्ते' एवं श्राविका वर्ग 'यस्या क्षेत्रं' की स्तुति बोलते हैं।
१६. यहाँ वर्तमान में पुरुष वर्ग 'नमोस्तुवर्द्धमानाय' की ३ गाथा एवं श्राविका वर्ग 'संसार दावा' की तीन गाथा रूप स्तुति बोलता है।
१७. 'पन्नरसण्हं राइयाणं, पन्नरसण्हं दिवसाणं, एकपक्खाणं' बोलकर 'अब्भुट्ठिओमिसूत्र' बोलना 'संबुद्धा खामणा' है।
१८. 'इच्छामि ठामि सूत्र'
१९. यहाँ ज्येष्ठादि क्रम से, परम्परानुसार पाँच आदि साधुओं को 'अब्भुट्ठिओमिसूत्र' पूर्वक तथा शेष साधु को हाथ जोड़कर क्षमायाचना करना 'प्रत्येक क्षमायाचना' है।
२०. चतुर्दशी के दिन यथाशक्ति तप किया हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. 'करेमि भंते सूत्र'

२२. इच्छामि ठामि सूत्र

२३. पाक्षिक सूत्र

२४. लोगस्स सूत्र

२५. एक खमासमणपूर्वक भूमि पर मस्तक झुकाकर वन्दन करना थोभवन्दन है।

२६. खरतरगच्छ की वर्तमान परम्परा में पाक्षिक प्रतिक्रमण के दिन 'श्रुतदेवता' के स्थान पर 'कमलदल विपुल', 'भुवन देवता' के स्थान पर 'ज्ञानादि गुणयुक्तानां' क्षेत्रदेवता के स्थान पर 'यस्या क्षेत्रं' की स्तुति बोलते हैं तथा तपागच्छ की वर्तमान परम्परा में श्रुतदेवता के स्थान पर 'ज्ञानादि गुणयुक्तानां' क्षेत्र देवता के स्थान पर 'यस्यां क्षेत्रं' की स्तुति बोलते हैं।

२७. वर्तमान में इस स्थान पर 'श्री सेढीतटिनी तटे' नामक पार्श्वनाथ स्तोत्र बोलते हैं।

२८. णमोत्थुणं सूत्र

२९. उवसग्गहर स्तोत्र

३०. वर्तमान में इस स्थान पर 'बृहद् स्तवन' बोलते है।

३१. णमोत्थुणं सूत्र

३२. करेमि भंते सूत्र

३३. इच्छामि ठामि सूत्र

३४. लोगस्स सूत्र

३५. पुक्खरवरदी सूत्र

३६. सिद्धाणं-बुद्धाणं सूत्र

३७. इच्छामि ठामि सूत्र

३८. यहाँ ध्यान देने योग्य है कि मुखवस्त्रिका प्रतिलेखन के बाद और प्रत्याख्यान ग्रहण करने के पूर्व खरतरगच्छ की वर्तमान परम्परा में 'सद्भक्त्या' नामक तीर्थ वंदना स्तोत्र और तपागच्छ परम्परा में 'सकलतीर्थवन्दूं कर जोड़' स्तोत्र बोलते हैं।

३९. यहाँ पर खरतरगच्छ की वर्तमान परम्परा में साधु, साध्वी एवं श्रावक वर्ग द्वारा 'परसमयतिमिर' स्तुति की तीन गाथा और श्राविका वर्ग द्वारा 'संसारदावानल' स्तुति की तीन गाथा बोली जाती है तथा तपागच्छ परम्परा में साधु-श्रावक 'विशाललोचनं' स्तुति की तीन गाथा और साध्वीजी एवं श्राविकाएँ 'संसारदावानल' स्तुति की तीन गाथा बोलते हैं।

-ओ.टी.सी. स्कीम, उदयपुर (राज.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org